“अनुसन्धान” –संक्षिप्त परिचय (संकलन)

स्रोत: परिभाषा संहिता, अनुभवात्मक अध्यात्मवाद

मध्यस्थ दर्शन के अनुसार अस्तित्व में परमाणु में तीन संक्रमण होते हैं:

- गठनपूर्णता, क्रियापूर्णता, आचरणपूर्णता
- संक्रमण का तात्पर्य पीछे के अवस्था में जाने से मुक्त होना – यही विकास है
- पूर्णता के अनन्तर पूर्णता की निरन्तरता पाई जाती है

परिभाषाएं

पूर्णता - गठनपूर्णता, क्रियापूर्णता, आचरणपूर्णता।

- अमरत्व, विश्राम, गंतव्य। विकासक्रम में परमाणु परमाणु गठनपूर्णता में अमरत्व को, क्रियापूर्णता में विश्राम को एवं आचरणपूर्णता में गंतव्य अर्थात पूर्ण विश्राम को पाता है।

परमाणु में ३ संक्रमण: गठनपूर्णता, क्रियापूर्णता, आचरणपूर्णता

संक्रमित - जीवन पद में गठनपूर्णता, क्रियापूर्णता, आचरणपूर्णता।

- पीछे की स्थिति में जाने से मुक्त चैतन्य इकाई।

- गठनपूर्णता तभी संभव है जब एक परमाणु में जितने अंश समाने की सम्भावना है, वह सब समा जाय, क्रियापूर्णता तभी संभव है जब मानवीयता के सीमा में जीवन, जागृति क्रम तथा जीवन के कार्यक्रम को स्थापित एवं निर्वाह कर लें, आचरणपूर्णता तभी संभव है जब अतिमानवीयता पूर्ण स्वभाव को अर्जित स्वभाव के रूप में पा लें।

प्रकाशक: www.divya-path.org

गठनपूर्णता: परमाणु में "परिणाम का अमरत्व"

- जड़ परमाणु ही विकास पूर्वक चैतन्यता को प्राप्त करता है | यही 'जीवन परमाणु' है | यह भार बंधन, अणुबंधन से मुक्त, जीने के आशा से युक्त है | परमाणु में मध्यांश व परिवेशिय अंशों का निश्चित संख्यात्मक विधि से संतुष्ट होना। प्रस्थान-विस्थापन से मुक्त होना। चैतन्य इकाई, जीवन-ऋतम्भरा अनुभव प्रमाण, आशा, विचार, इच्छा का प्रकाशन।
- गति: - गठन पूर्णता के अर्थ में, परमाणु में अंशों की संख्या में परिवर्तन के साथ मात्रात्मक परिवर्तन, फलस्वरूप गुणात्मक परिवर्तन । परिवर्तन का अंतिम परिणाम अथवा संक्रमण गठन पूर्णता । यही परिणाम का अमरत्व है।
- यही चैतन्य रूपी 'जीवन' परमाणु है | इसमें केन्द्रीय अंश का नाम आत्मा, प्रथम परिवेशीय अंशों का नाम बुद्धि, द्वितीय परिवेशिय अंशों का नाम चित्त, ततृतीय परिवेशीय अंशों का नाम मन तथा चतुर्थ परिवेशीय अंशों का नाम 'मन' है |
- गठनपूर्ण चैतन्य परमाणु में मन, वृत्ति, चित्त, बुद्धि एवं आत्मा अविभाज्य हैं – इनका वियोग नहीं है | अर्थात, जीवन 'अमर' है |

क्रियापूर्णता : परमाणु में "श्रम का विश्राम"

- चैतन्य 'जीवन' जीने के आशा से युक्त जीव शरीरों को समृद्ध मेधस द्वारा संचालित करता है – यही 'जीवनी क्रम है'
- जीवन ही विकसित होकर समृद्धि पूर्ण मेधस से युक्त मानव शरीर को चलाता है | स्वयं को शरीर मानते हुए कुल दस में से साढ़े चार क्रीया ही व्यक्त होता है – यही 'भ्रमित जीवन', मानव में जीव चेतना, **'भ्रांत' मानव** है |
- ज्ञान पूर्वक मानव विकसित चेतना को पाता है तथा जागृत होता है | मन, वृत्ति, चित्त, बुद्धि की सम-विषमातिरेक नियंत्रण सहज। यही जीवन जागृति है |
- समाधान - प्रखर प्रज्ञा |

- जागृति सहज सर्वतोमुखी समाधान, सहअस्तित्व में जीने का प्रमाण, संज्ञानीयता, परिष्कृत चेतना ।
- सतर्कता, मानवीयतापूर्ण क्रियाकलाप।
- सर्वतोमुखी समाधान = क्रियापूर्णता = सामाजिकता |
- गति: -- क्रियापूर्णता के अर्थ में गंतव्य क्रम में गुणात्मक परिवर्तन अर्थात् अमानवीयता से मानवीयता सतर्कता और मानवीयता से सतर्कता पूर्ण परिष्कृत संचेतना अर्थात् अतिमानवीयता का प्रकाशन और प्रतिष्ठा –यही देव मानवीयता। यही श्रम का विश्राम है |

आचरणपूर्णता: परमाणु में "गति का गंतव्य"

- गुणात्मक विकास का परम बिंदु, सत्य, धर्म, निर्भयता, न्याय, नियम, जीवन तृप्ति और उसकी निरंतरता।
- जीवन मुक्त (पूर्ण भ्रम मुक्त जीवन) सजगता, सहजता, कैवल्य, गन्तव्य, विकास तथा जागृति का चरमोत्कर्ष। परिष्कृतिपूर्ण संचेतना |
  - दिव्य मानव प्रतिष्ठा-दिव्य मानवीयता।
- गति: - आचरणपूर्णता के गंतव्य क्रम में श्रेष्ठ और श्रेष्ठतम गुणात्मक परिवर्तन, परिमार्जन जिसका प्रमाण सजगता परीपूर्ण, परिष्कृति पूर्ण संचेतना का प्रकाशन और प्रतिष्ठा है –यही दिव्य मानवीयता । यही गति का गंतव्य है |
- जागृति पूर्णता
  - क्रियापूर्णता सहित आचरणपूर्णता, दृष्टापद प्रतिष्ठा जागृति, अखण्ड समाज सार्वभौम व्यवस्था में भागीदारी।
  - गति का गन्तव्य, सजगता, सहजता, प्रामाणिकता |
  - जाना हुआ को माना, माना हुआ को जाना सहज परम विकास - ऋतंभरा प्रज्ञा |
- पूर्ण- विश्राम - क्रियापूर्णता में परिपूर्ण, गति का गंतव्य, आचरणपूर्णता, फलत: समाधान = व्यवस्था व समग्र व्यवस्था में भागीदारी सहज है।

तालिकाएं

*स्रोत: सत्ता में संपृक्त प्रकृति, १९८६

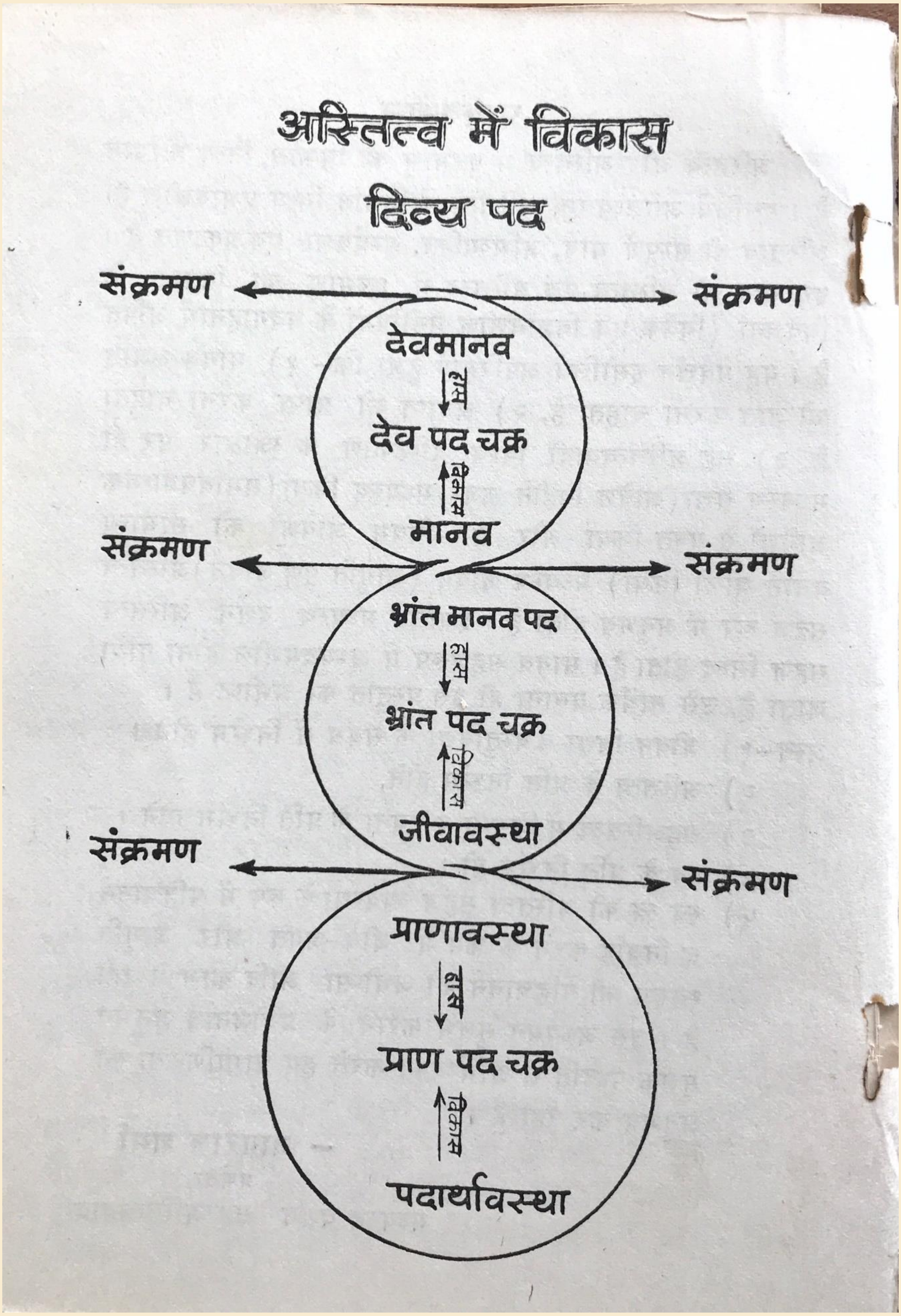
अस्तित्व में विकास
दिव्य पद
संक्रमण
संक्रमण
देवमानव
ह्रास
देव पद चक्र
विकास
मानव
संक्रमण
संक्रमण
भ्रांत मानव पद
ह्रास
भ्रांत पद चक्र
विकास
जीवावस्था
संक्रमण
संक्रमण
प्राणावस्था
ह्रास
प्राण पद चक्र
विकास
पदार्थावस्था

अस्तित्व में परमाणु का विकास

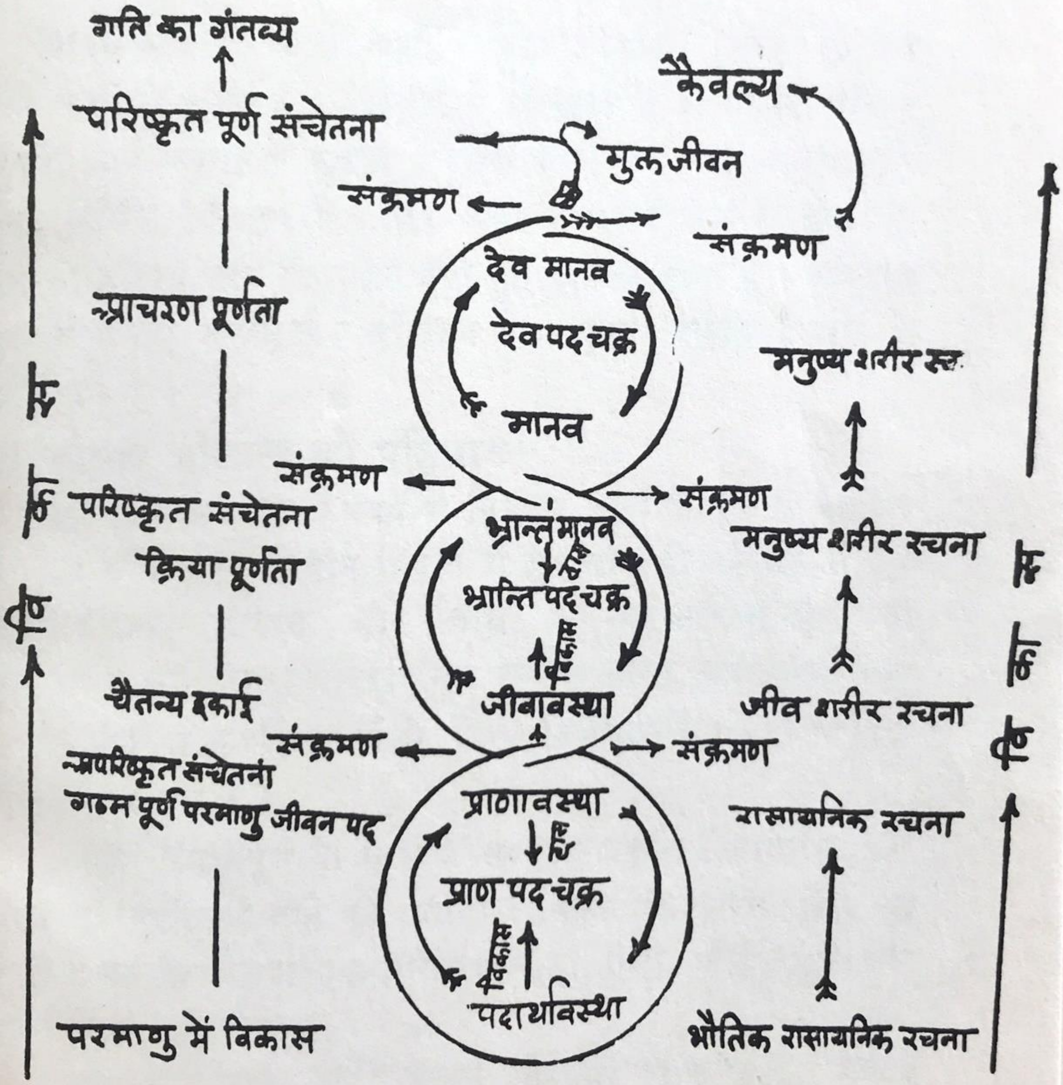

अस्तित्व में सहअस्तित्व

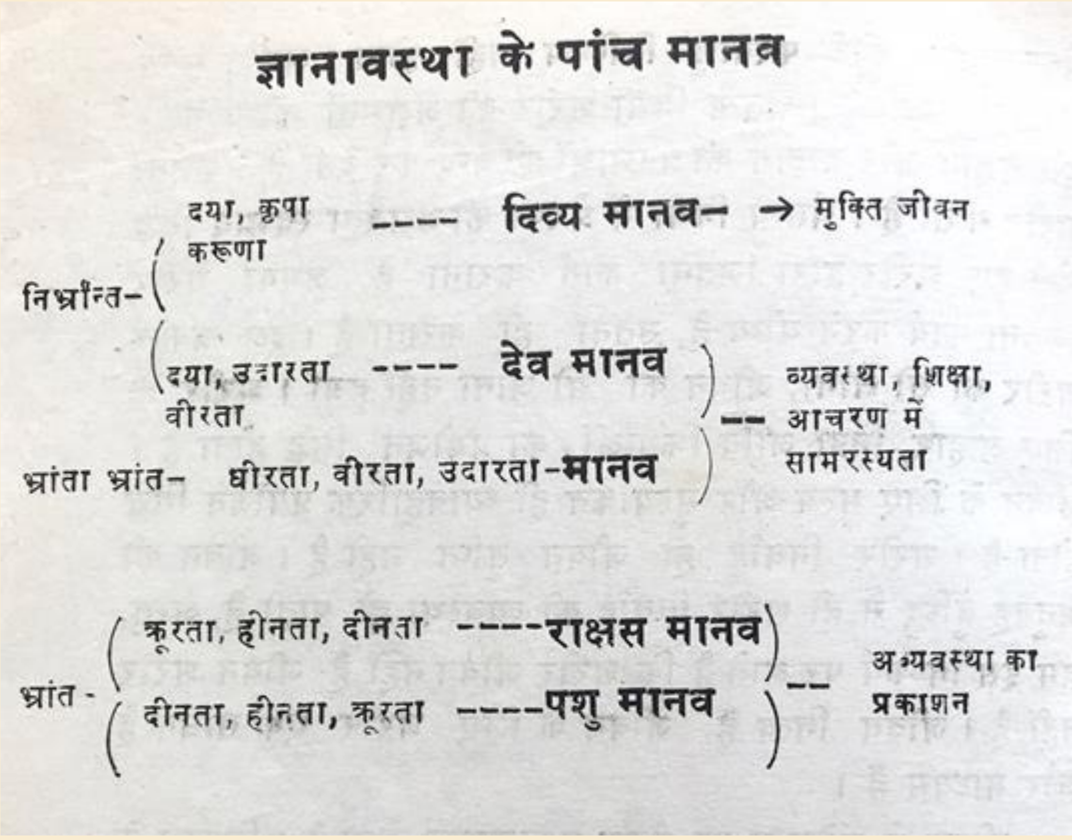
ज्ञानावस्था के पांच मानव
निर्भ्रांत-
दया, कृपा करूणा
---- दिव्य मानव– → मुक्ति जीवन
दया, उदारता वीरता
---- देव मानव
भ्रांता भ्रांत-
धीरता, वीरता, उदारता-मानव
-- व्यवस्था, शिक्षा, आचरण में सामरस्यता
भ्रांत -
क्रूरता, हीनता, दीनता
----राक्षस मानव
दीनता, हीनता, क्रूरता
----पशु मानव
-- अव्यवस्था का प्रकाशन

३ पूर्णताएं : व्याख्या

स्रोत: अनुभवात्मक अध्यात्मवाद, २००० संस

गठनपूर्णता

अस्तित्व में व्यवस्था का मूल स्रोत और आधार परमाणु ही है। हर प्रजाति सहज परमाणु में मध्य में अंश अथवा अंशों का होना देखा गया है। इसी के साथ जड़-चैतन्य प्रकृति के रूप में मूलत: परमाणुएँ विभाजित है। जड़ परमाणुएँ अणु और अणु-रचित रचना सहित भौतिक-रासायनिक क्रियाकलापों में भागीदारी करना देखा जाता है। चैतन्य प्रकृति जीवनी क्रम, जागृति क्रम, जागृति और जागृति पूर्णता को प्रकाशित करने, व्यक्त करने और संप्रेषित करने/होने के क्रम में दृष्टव्य है।

चैतन्य परमाणु में भी मध्यांश का होना स्वाभाविक है और देखा गया है। चैतन्य परमाणु में मध्य में एक ही अंश होता है और मध्यस्थ क्रिया के रूप में वह सतत् कार्यरत रहता है।

जबकि जड़ परमाणुओं में मध्यस्थ क्रिया सहज कार्य करने वाला एक ही अंश होता है, परन्तु मध्य में एक से अधिक अंशों का समावेश भी रहता है। इसमें खूबी यही है जड़-परमाणुओं में मध्यांश के मध्यस्थ क्रिया सहज कार्य करने वाले और भी अंश उसके साथ जुड़े रहते है, कुछ अंश मध्य भाग में रहते हुए सम-विषमात्मक कार्य के लिये संतुलित बनाने के लिए सहायक बने रहते हैं। यही मुख्य कारण है जड़ परमाणुओं में प्रस्थापन-विस्थापन होने का। इसकी आवश्यकता इसलिये अनिवार्य है कि परमाणुओं में ही विकास क्रम, विकास प्रमाणित होता है और विकास प्रमाणित होने के लिये प्रस्थापन-विस्थापन अनिवार्य रहता ही है और अनेक यथास्थितियों के लिए सार्थक है।

चैतन्य इकाई रूपी परमाणु 'जीवन' में प्रस्थापन, विस्थापन सदा-सदा के लिये शून्य रहता है। इसी आधार पर मध्यांश रूप में एक ही अंश कार्यरत रहता है।

फलस्वरूप भारबन्धन से मुक्त रहता है। भारबन्धन से मुक्त होने का फलन है अणुबन्धन से मुक्त होने का सूत्र। गठनपूर्णता के अनन्तर स्वाभाविक रूप में परिणाम का अमरत्व जो परमाणु में क्रिया का आशय अथवा दिशा बनी रहती है, जिसके आधार पर ही विकास के साथ जागृति सुनिश्चित बनी रहती है। विकास का मंजिल ही परिणाम का अमरत्व होना देखा गया है। यह भी देखा गया है परावर्तन, प्रत्यावर्तन मध्यस्थ क्रिया का नित्य कार्य है। क्रिया पूर्णता व आचरण पूर्णता, जागृति का द्योतक होना स्पष्ट हो चुकी है। क्रिया पूर्णता पूर्वक ही मानवीयतापूर्ण संचेतना (जानना-मानना-पहचानना-निर्वाह करना) सार्थक हो जाता है। आचरण पूर्णता में जागृति पूर्णता, गति का गंतव्य अनुभव सहज सार्थक होना देखा गया है। यही मुक्ति पद का प्रमाण है। दिव्य मानव का स्वरूप यही है।

क्रियापूर्णता

जागृतिक्रम में आशा, विचार, इच्छा बन्धन रहते हुए मानव प्रिय, हित, लाभवादी कार्यकलापों में व्यस्त रहते हुए भी जीवन सहज नियंत्रण, शरीर को जीवंत और नियंत्रित बनाये रखने में 'मध्यस्थ क्रिया' कार्यरत रहता है। इसी के साथ-साथ अव्यवस्था की पीड़ा, व्यवस्था की भासपूर्वक आवश्यकता, और पाने की आशा 'मध्यस्थ क्रिया' के रूप में ही निर्गमित होती है। अतएव जागृति की संभावना की ओर ध्यानाकर्षण होना 'मध्यस्थ क्रिया' की ही महिमा है।

मानव द्वारा ही भ्रमवश अल्प विकसित स्थिति में किये गये कार्यकलापों, कृत्यों के परिणाम स्वरूप धरती मानव निवास के लिये अयोग्य होने का क्रम आरंभ है। जागृत होने की आवश्यकता है और जीवन सहज रूप में हर व्यक्ति जागृति को स्वीकारता है। इन दोनों आवश्यकतावश जागृति और जागृति पूर्णता की ओर गतित होना अनिवार्य हुआ है। जागृति के क्रम में जीवन में कार्यरत मध्यस्थ क्रिया गठनपूर्णता सहज ऐश्वर्य को संतुलित रखते हुए न्यायपूर्ण विधि से व्यक्त होने के रूप में संतुलित, नियंत्रित और सार्वभौम व्यवस्था, अखण्ड समाज, सर्वतोमुखी समाधान में, से, के लिये भास, आभास, प्रतीति के रूप में कार्यरत रहता है, यही अवधारणा है। इसी बिन्दु में सह-अस्तित्व सहज विधि से वर्तमान में विश्वास होना मध्यस्थ क्रिया का वैभव होता है।

जागृत स्थिति में संघर्ष का तिरोभाव, सह-अस्तित्व में विश्वास होना मध्यस्थ क्रिया का प्रभाव है। ये सब प्रतीतियाँ बोध रूप में, सत्य बोध रूप में होना देखा गया है। यह बोध जागृत परंपरापूर्वक सर्वसुलभ होता है।

मध्यस्थ क्रिया सहज न्याय और धर्म (सर्वतोमुखी समाधान) व्यवहार में फलित होना स्वाभाविक होता है और प्रामाणिकता के लिये अपरिहार्यता निर्मित हो जाती है।

'क्रिया पूर्णता' की स्थिति में 'मध्यस्थ क्रिया' की महिमा है। तात्विक रूप में इस को इस प्रकार से देखा गया है न्यायान्याय, धर्माधर्म, सत्यासत्य दृष्टियाँ भ्रम बन्धन से मुक्ति; श्रम का विश्राम; न्याय, धर्म, सत्य बोध होते ही स्वाभाविक रूप में ऐसा मध्यस्थ क्रिया सहज अनुशासित जीवन कार्य व्यवहार में प्रमाणित हो जाता है। इसी के साथ-साथ अनुभव की आवश्यकता अपने आप बलवती होता है। जीवन अपने में से व्यवस्था में भागीदारी सहज विधि को स्वीकार लेता है। यह सर्वदा के लिये संस्कार और बोध होना पाया जाता है। यही श्रम का विश्राम स्थिति है।

आचरणपूर्णता

‘आचरणपूर्णता’ चैतन्य इकाई में व्यक्त होना, प्रमाणित होना नियति सहज अभिव्यक्ति होने के कारण ही है। परिणाम का अमरत्व, श्रम का विश्राम और गति का गंतव्य सह-अस्तित्व सहज जागृति विधि सहित अभिव्यक्त होना, इसी धरती पर सुस्पष्ट हो जाता है।

‘आचरणपूर्णता’ स्थिति में मध्यस्थ क्रिया का जागृति पूर्णता सहज अर्थात् सह-अस्तित्व में अनुभव सहित प्रभाव क्षेत्र में सम्पूर्ण जीवन अभिभूत हो जाता है। इसको ऐसा देखा गया है कि जागृतिपूर्ण होते ही अर्थात् अस्तित्व में अनुभव होते ही जीवन के सभी अवयव पूर्णतया अनुप्राणित हो जाते है अर्थात् अनुभव सहज विधि से अनुप्राणित हो जाते हैं। यही बुद्धि में ‘सहज बोध’ चित में ‘सहज साक्षात्कार’, वृत्ति में ‘सहज तुलन’ एवं मन में ‘सहज आस्वादन’ नित्य प्रतिष्ठा के रूप में होना देखा गया है। इस जागृति प्रतिष्ठा सम्पन्न जीवन में चयन प्रक्रिया प्रामाणिकता से, विश्लेषण प्रक्रिया प्रामाणिकता से, चित्रण प्रक्रिया प्रामाणिकता से, संकल्प प्रक्रिया प्रामाणिकता से अभिभूत अनुप्राणित रहना देखा गया है। यही जागृति पूर्ण जीवन में मध्यस्थ क्रिया की महिमा है। जिसकी आवश्यकता, अनिवार्यता, प्रयोजनीयता कितना है, कहाँ तक है? यह हर व्यक्ति मूल्यांकन कर सकता है।

तात्विक रूप में ‘आचरण पूर्णता’ ही गंतव्य होने के कारण अस्तित्व ही नित्य वर्तमान और स्थिर होना अस्तित्व में अनुभव के फलन में सत्यापित होता है। यही सत्यापन सम्पूर्ण जीवन क्रियाकलापों में अनुप्राणन विधि में स्थापित हो जाता है अर्थात् आत्मा में हुई अनुभव से जीवन सहज सभी क्रियाएँ अनुप्राणित हो जाते हैं और अनुभव के फलन में तृप्ति अथवा आनन्द आत्मा में होना स्वाभाविक है।

सम्पूर्ण वांडमय डाउनलोड:

www.madhyasth.org | www.bit.ly/dpsroot